प्रशासन में विधान मंडल की भूमिका

- प्रो.डी.के.पी.चौधरी
आचार्य, राजनीति विज्ञान
स.भ.सिं.राज.स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
रुद्रपुर

प्रस्तावना

समाज के व्यवस्थित संचालन में नियमों की भूमिका अत्यन्त महत्व रखती है । आधुनिक समय में नियम –निर्माण का कार्य करनेवाली संस्थाओं को विधानमंडल या विधायिका कहा जाता है । इसके साथ –साथ नीति निर्माण प्रक्रिया में सरकार के तीनो अंग- कार्यपालिका , व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका – किसी न किसी रूप में सम्बद्ध होते हैं । इनमें व्यवस्थापिका या विधान मंडल की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । नीति –निर्माण प्रधानतः विधान मंडल का काम है क्योंकि नीति का आधार एवं प्रारूप विधान मंडल द्वारा ही निर्धारित एवं निश्चित होता है। विधान मंडल अपने समक्ष प्रस्तुत प्रत्येक नीतिगत प्रस्तावों पर चर्चा एवं विश्लेषण करती है तथा इन्हें अंतिम रूप देती है ।

विधान मंडल का अर्थ

नीति निर्माण सरकार की सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं में से एक है । किसी देश के सामाजिक-आर्थिक रुपांतरण में लोकनीति की भूमिका महत्वपूर्ण होती है । नीति वह साधन या माध्यम है जिसके सहारे लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है । विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका- लोकतंत्र के तीन स्तंभ हैं । कार्यों की प्रकृति एवं सार्वजनिक उत्तरदायित्व के दृष्टिकोण से विधायिका या विधान मंडल तीनों अंगों में सर्वोच्च है । विधायिका शब्द विधि बनाने वाली सरकारी इकाई के लिये प्रयोग में आता है । भारतीय संविधान में विधायिका की परिभाषा की जगह विधायिका की शक्तियों का तथा उसके अधिकार तथा कर्तव्यों का वर्णन किया गया है जिसके अंतर्गत विधायिका को विधि बनाने का अधिकार है ।

सामान्यतः विधायिका या विधान मंडल सरकार का वह अंग है जिसका कार्य विधि निर्माण है । विश्व में प्राकृतिक और भौगोलिक विविधता के साथ-साथ राजनैतिक संरचना में भी भिन्नता है । राजतंत्र, तानाशाही सत्ता में केन्द्रीकरण के उदाहरण हैं जबकि प्रजातंत्र और लोकतंत्र में जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन किया जाता है ।किसी देश की विधान मंडल या विधायिका का स्वरुप एवं संगठन वहां की संवैधानिक व्यवस्था द्वारा निर्धारित किया जाता है । विधायिका शब्द विधि बनाने वाली सरकारी इकाई के लिये प्रयोग में आता है ।

विधानमंडलों का विकास लोकतंत्र की स्थापना के साथ ही हुआ है परन्तु इसका व्यापक अर्थ लें तो ये काफी प्राचीन प्रतीत होती हैं । व्यापक अर्थ में व्यक्तियों का वह समूह जो कोई प्रतिनिध्यात्मक आधार नहीं रखते हुए भी शासक को सलाह ,सहायता या प्रेरणा देने का कार्य करता है , विधान मंडल कहा जाता है। सामान्य अर्थ में विधान मंडल व्यक्तियों का ऐसा समूह है जो कानून बनाने के अधिकार से युक्त होता है । यह आवश्यक नहीं है कि वह प्रतिनिध्यात्मक ही हो। ग्रेट ब्रिटेन की संसद ,जिसे 'संसदों की जननी' भी कहा,जाता है ,वह आज भी सही अर्थों में प्रतिनिध्यात्मक नहीं है ।

विधायिका का कार्य है विधान बनाना, नीति निर्धारण करना, शासन पर संसदीय निगरानी रखना तथा वित्तीय नियंत्रण करना। दूसरी ओर कार्यपालिका का कार्य है विधायिका द्वारा बनायी गयी विधियों और नीतियों को लागू करना एवं शासन चलाना। कार्यपालिका सरकार का वह अंग है जिसका कार्य विधान मंडल द्वारा पारित विधेयकों का क्रियान्वयन करना है । विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका लोकतंत्र के तीन स्तंभ अवश्य हैं, संसद की सर्वोच्चता भारतीय शासन की प्रमुख विशेषता है। संसद को विधायिका अथवा व्यवस्थापिका नाम से भी जाना जाता है ।

किसी देश के विधान मंडल का स्वरुप एवं संगठन वहां की संवैधानिक व्यवस्था द्वारा निर्धारित किया जाता है । अलग – अलग देशों में इसके संगठन के लिए अलग – अलग आधार अपनाया गया है । कुछ देशों में विधान मंडल का संगठन प्रत्यक्ष रूप से वयस्क मताधिकार के आधार पर होता है तो कुछ देशों में इसका आधार अप्रत्यक्ष रूप से होता है । आम तौर से द्वितीय सदन के संगठन का आधार अप्रत्यक्ष होता है । विश्व में विधान मंडल के विविध स्वरुप हैं , यथा – एकसदनात्मक, द्विसदनात्मक,प्रतिनिध्यात्मक ,मनोनीत आदि –आदि । विधानमंडल का संगठन प्रतिनिधित्व एवं राजनीतिक दलों द्वारा भी प्रभावित होता है । सदनों की संख्या ,सदन का आकार , कार्यकाल,समिति व्यवस्था एवं अधिकार अलग – अलग देशों में अलग – अलग आधार पर निर्धारित किए गए हैं। विधानमंडल के किसी रूप की उपयोगिता एवं सार्थकता उस देश की परिस्थितियों एवं जनसंख्या के चरित्र पर निर्भर करती है । राजनीतिक शासन व्यवस्था के विभाजन का एक प्रमुख आधार कार्यपालिका का स्वरूप है । कार्यपालिका एवं विधायिका के परस्पर संबंधों के आधार पर शासन दो रूपों में बाँटा जा सकता है – संसदीय एवं अध्यक्षात्मक । आधुनिक लोकतन्त्र के युग में सरकार का विभाजन का प्रमुख आधार पर यही है । संसदीय शासन प्रणाली में शासन की व्यवस्था के तीनों आधार स्तंभ क्रमश: कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका स्वतंत्र होते हैं।

<u>भारतीय विधानमंडल</u>

किसी भी देश की शासन व्यवस्था उसके राजनीतिक जीवन का अभिन्न अंग होती है । यह राज्य की नीतियों को लागू कर उसके लक्ष्यों को साकार बनाती है तथा उसे सार्थकता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । भारतीय संविधान में विधायिका की परिभाषा की जगह विधायिका की शक्तियों का तथा उसके अधिकार तथा कर्तव्यों का वर्णन किया गया है जिसके अंतर्गत विधायिका को विधि बनाने का अधिकार है ।

भारत एक संपूर्ण प्रभुतासंपन्न, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष एवं लोकतांत्रिक गणराज्य है । भारतीय संविधान में संसदीय प्रणाली को अपनाया गया है जिसके अनुसार शासन के दो प्रधान –संवैधानिक एवं वास्तविक – होते हैं तथा कार्यपालिका एवं विधायिका में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है । संसदीय प्रणाली वाले देशों में नीति निर्माण एवं प्रशासन एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े होते है । वस्तुतः विधायिका के सदस्य ही कार्यपालिका का निर्माण करते है और कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है । इन्हीं कारणों से नीति निर्माण एवं प्रशासन के मध्य एक अटूट रिश्ता हो जाता है । इस सन्दर्भ में पीटर ओडेगार्ड का कथन बिल्कुल सही है कि नीति और प्रशासन राजनीति के जुड़वाँ बच्चे हैं जो एक –दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते हैं । उपरोक्त कथन न केवल संसदीय प्रणाली वाले देशों के लिए सही है बल्कि अध्यक्षीय प्रणाली वाले देशों के सन्दर्भ में भी बहुत हद तक सही है , जहाँ शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत लागू होता है ।

'संसदीय' शब्द का अर्थ ही ऐसी लोकतंत्रात्मक राजनीतिक व्यवस्था है जहां सर्वोच्च शक्ति जनता के प्रतिनिधियों के उस निकाय में निहित है जिसे 'संसद' कहते हैं। भारतीय लोकतंत्र में संसद जनता की सर्वोच्च प्रतिनिधि संस्था है। इसी माध्यम से आम लोगों की संप्रभुता को अभिव्यक्ति मिलती है। संसद ही इस बात का प्रमाण है कि हमारी राजनीतिक व्यवस्था में जनता सबसे ऊपर है अर्थात् जनमत सर्वोपरि है।संसद वह धुरी है जो देश के शासन की नींव है। संविधान में विधायी शक्तियां संसद एवं राज्य विधानसभाओं में विभाजित की गई हैं तथा शेष शक्तियां संसद को प्राप्त हैं। संविधान में संशोधन का अधिकार भी संसद को ही प्राप्त है। भारत के संविधान में संघीय सरकार और राज्यों की शक्तियों का स्पष्ट विभाजन किया गया है । इस दृष्टि से समस्त कार्यों को तीन सूचियों में बाँट दिया गया है । संघीय सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची । संघ सूची में आये हुए समस्त कार्यों को संघीय सरकार सम्पन्न करती है और राज्य सूची में आए हुए कार्य राज्य सरकार के होते हैं । समवर्ती सूची में आए हुए विषयों पर संघीय और राज्य दोनों ही सरकारें कानून बना सकती है । परन्तु संघीय कानूनों को प्राथमिकता दी जाती है ।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 79 द्वारा यह व्यवस्था की गयी है कि "संघ के लिए एक संसद होगी जो राष्ट्रपति और दो सदनों से मिलकर बनेगी , जिसके नाम क्रमशः लोकसभा और राज्यसभा होंगे।" भारत का राष्ट्रपति संसद का अंग होता है। संसद द्वारा पारित विधेयक तब तक अधिनियम नहीं बनता जब तक कि राष्ट्रपति उस पर अपनी स्वीकृति नहीं देता है । यद्यपि राष्ट्रपति संसद के किसी सदन का सदस्य नहीं होता , उसे संसद का अधिवेशन बुलाने ,स्थगित करने तथा लोक सभा को भंग करने का अधिकार है । इतना ही नहीं, जब संसद के दोनों सदनों का अधिवेशन न चल रहा हो और राष्ट्रपति को महसूस हो कि इन परिस्थितियों में तुरंत कार्यवाही जरूरी है तो वह अध्यादेश जारी कर सकता है। इस अध्यादेश की शक्ति एवं प्रभाव वही होता है जो संसद द्वारा पास की गई विधि का होता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति लोकसभा के लिए प्रत्येक आम चुनाव के पश्चात अधिवेशन के शुरू में और हर साल के पहले अधिवेशन के प्रारंभ में राष्ट्रपति एक साथ संसद के दोनों सदनों के सामने अभिभाषण करता है।

लोक सभा संसद का प्रथम एवं निम्न सदन है । इसे लोकप्रिय सदन भी कहा जाता है । लोक सभा का गठन वयस्क मतदान के आधार पर निर्वाचित सदस्यों से होता है। सदन के सदस्यों की अधिकतम संख्या 552 निर्धारित की गयी है ,जिसमे 530 सदस्य राज्यों का प्रतिनिधित्व तथा 20 केंद्र शासित प्रदेशों का प्रतिनिधित्व करतें हैं । अधिक से अधिक आंग्ल-भारतीय समुदाय के दो सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किए जा सकते हैं, यदि उसके विचार से उस समुदाय का सदन में पर्याप्त नेतृत्व नहीं है । लोक सभा के कुल निर्वाचित सदस्यों की संख्या का राज्यों के बीच इस तरह वितरण किया जाता है कि प्रत्येक राज्य को आबंटित सीटों की संख्या और राज्य की जनसंख्या के बीच का अनुपात जहां तक व्यवाहारिक हो ,सभी राज्यों के लिए बराबर होता है। वर्तमान में लोक सभा में 545 सदस्य हैं। इनमें से 530 सदस्य प्रत्यक्ष रूप राज्यों से चुने गए हैं और 13 संघ राज्य क्षेत्रों से, जबकि दो सदस्यों का मनोनयन आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व करने के लिए राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है । भारत संविधान के तहत प्रथम आम चुनाव वर्ष

1951-52 में आयोजित किए गए थे तथा प्रथम निर्वाचित संसद अप्रैल 1952 में अस्तित्व में आई । दूसरी लोकसभा अप्रैल 1957 में, तीसरी लोकसभा अप्रैल 1962 में, चौथी लोक सभा मार्च 1967 में, पांचवीं लोकसभा मार्च 1971 में, छठी लोकसभा मार्च 1977 में, सातवीं लोकसभा जनवरी 1980 में, आठवीं लोकसभा दिसम्बर 1984 में, नौंवी लोकसभा दिसम्बर 1989 में, दसवीं लोकसभा जून 1991 में, ग्यारहवी लोकसभा मई 1996 में, बारहवीं लोकसभा मार्च 1998 में, तेरहवीं लोकसभा अक्तूबर 1999 में, चौदहवीं लोकसभा मई 2004 में ,पन्द्रहवीं लोकसभा अप्रैल 2009 , सोलहवीं लोकसभा मई 2014 तथा सत्रहवीं लोकसभा मई 2019 में अस्तित्व में आई ।

वहीँ दूसरी ओर , राज्य सभा एक स्थायी सदन है तथा इसे भंग नहीं किया जा सकता। इसके एक तिहाई सदस्य प्रत्येक दूसरे वर्ष सेवानिवृत्त होते हैं तथा उन्हें नए निर्वाचित सदस्यों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है। प्रत्येक सदस्य छः वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित होते हैं । राज्य सभा में अधिक से अधिक 250 सदस्य होते हैं – 238 सदस्य राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों के प्रतिनिधि होंगे तथा 12 सदस्यों को राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किया जाएगा। भारत का उपराष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन सभापति है। यह सदन अपने सदस्यों में से एक उप सभापति का चुनाव भी करता है। इसके अतिरिक्त, राज्य सभा में उप-सभापतियों का एक पैनल होता है। सामान्यतया प्रधानमंत्री द्वारा वरिष्ठतम मंत्री, जो राज्य सभा का सदस्य होता है, को सदन के नेता के रूप में नियुक्त किया जाता है ।

<u>विधायी प्रक्रिया</u>

विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका- लोकतंत्र के तीन स्तंभ अवश्य हैं, परंतु इन स्तंभों की स्थिति और स्वरूप एक समान नहीं है। तीनों का स्थान समानांतर धरातल पर नहीं है। कानून बनाना संसद का प्रमुख काम माना जाता है। इसके लिए पहल अधिकांशतया कार्यपालिका द्वारा की जाती है। सरकार विधायी प्रस्ताव पेश करती है। उस पर चर्चा तथा वाद विवाद के पश्चात संसद उस पर अनुमोदन की अपनी मुहर लगाती है।

संसद का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य देश के लिए कानून का निर्माण है । संसद को संघ सूची ,समवर्ती सूची तथा विशेष परिस्थितियों में राज्य सूची के विषयों पर भी कानून बनाने का अधिकार है । हालाँकि समवर्ती सूची पर संसद एवं राज्य विधान मंडल दोनों को ही कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है , विरोधाभास की स्थिति में संसद द्वारा बनाये गए कानून ही मान्य होते हैं । राज्य विधान मंडल द्वारा बनाया गया कानून इस सन्दर्भ में स्वतः ही समाप्त माना जाता है । संविधान के अनुच्छेद 107 से 122 तक कानून बनाने की प्रक्रिया का उल्लेख है । सभी कानूनी प्रस्ताव विधेयक के रूप में संसद में पेश किए जाते हैं। विधेयक विधायी प्रस्ताव का मसौदा होता है। विधेयक संसद के किसी एक सदन में सरकार द्वारा या किसी गैर-सरकारी सदस्य द्वारा पेश किया जा सकता है। इस प्रकार मोटे तौर पर, प्रस्तुतकर्ता के आधार पर विधेयक दो प्रकार के होते हैं : (क) सरकारी विधेयक और (ख) गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयक। विधि का रूप लेने वाले अधिकांश विधेयक सरकारी विधेयक होते हैं। वैसे तो गैर सरकारी सदस्यों के बहुत कम विधेयक विधि का रूप लेते हैं। फिर भी उनके द्वारा यह बात सरकार और लोगों के ध्यान में लाई जाती है कि मौजूदा कानून में संशोधन करने या कोई आवश्यक विधान बनाने की आवश्यकता है ।

प्रकृति के आधार पर सामान्यतः विधेयक दो प्रकार के होते हैं :

(1) साधारण विधेयक

(ब) वित्त विधेयक

विधेयक का मसौदा उस विषय से संबंधित सरकार का मंत्रालय विधि मंत्रालय की सहायता से तैयार करता है। मंत्रिमंडल के अनुमोदन के बाद इसे संसद के सामने लाया जाता है। संबंधित मंत्री द्वारा उसे संसद के दोनों सदनों में से किसी भी सदन में पेश किया जा सकता है। केवल धन विधेयक के मामले में यह पाबंदी है कि वह राज्यसभा में पेश नहीं किया जा सकता।

साधारण विधेयक संसद के किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है । अधिनियम का रूप लेने से पूर्व विधेयक को संसद में पांच अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। प्रत्येक विधेयक के प्रत्येक सदन में तीन वाचन होते हैं अर्थात पहला वाचन, दूसरा वाचन और तीसरा वाचन।

विधेयक का प्रस्तुतीकरण विधेयक का पहला वाचन है। कुछ विषयों से सम्बन्धित विधेयकों को सदन में प्रस्तावित करने से पूर्व राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति आवश्यक होती है ,यथा –राज्य की सीमाओं में परिवर्तन आदि । यदि संसद का कोई गैर-सरकारी सदस्य किसी विधेयक को सदन में प्रस्तुत करना चाहता है तो उसे अध्यक्ष को एक माह पूर्व इसकी सूचना देनी पड़ती है लेकिन सरकारी विधेयकों को प्रस्तुत करने के लिए किसी प्रकार की सूचना की आवश्यकता नहीं होती । आज्ञा मिल जाने के पश्चात् प्रथम वाचन के रूप में विधेयक के शीर्षक को प्रस्तुतकर्ता द्वारा पढ़कर सुना दिया जाता है । परंपरा के अनुसार इस अवस्था में चर्चा नहीं की जाती है । परन्तु एक सामान्य-सी बहस इसकी वैधता पर हो सकती है । विधेयक के प्रस्तुतीकरण के पश्चात् इसे भारत सरकार के गजट में प्रकाशित कर दिया जाता है ।

विधेयक का दूसरा वाचन सबसे अधिक विस्तृत एवं महत्वपूर्ण अवस्था है क्योंकि इसी अवस्था में इसकी विस्तार एवं बारीकी से जांच की जाती है। द्वितीय वाचन के प्रारंभ में विधेयक की प्रतियाँ सदन के सम्मुख सदस्यों में वितरित कर दी जाती है । सामान्यतया विधेयक के प्रथम वाचन एवं द्वितीय वाचन के मध्य दो दिनों का अंतर रखा जाता है किन्तु अध्यक्ष या सभापति आवश्यक समझे तो द्वितीय वाचन भी उसी दिन कराया जा सकता है । प्रायः सरकारी विधेयकों का द्वितीय वाचन उसी दिन करा लिया जाता है । इस स्तर पर विधेयक के प्रत्येक अनुच्छेद पर विस्तार से चर्चा नहीं होती , केवल मूल सिद्धातों पर ही विचार होता है । इस स्तर पर कोई संशोधन भी प्रस्तुत नहीं किया जाता है । यदि आवश्यक होता है तो विधेयक को संयुक्त प्रवर समिति के विचारार्थ सौंप दिया जाता है ।

समिति अवस्था में समिति द्वारा विधेयक के प्रत्येक प्रावधान पर बारीकी से विचार किया जाता है । इस दौरान समिति सम्बंधित विषय विशेषज्ञों से भी परामर्श ले लेती है । सामान्यतः समिति को विधेयक में संशोधन करने का भी अधिकार है । विधेयक के सभी पहलुओं की समीक्षा के पश्चात् निर्धारित अवधि या तीन माह ,जैसी भी स्थिति हो , अपना प्रतिवेदन समिति का संयोजक या सभापति सदन में प्रस्तुत करता है ।

प्रतिवेदन अवस्था में समिति द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन एवं संशोधन, यदि कोई हो तो , की प्रतियाँ सदन के समस्त सदस्यों में वितरित कर दी जाती है । यदि प्रवर समिति द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन सहित विधेयक सदन द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो सदन में उक्त संशोधनों सहित विधेयक के हरेक विन्दु पर विस्तार से चर्चा होती है । इस दौरान सदस्यों द्वारा भी संशोधन पेश किये जा सकते हैं । चर्चा के पश्चात् सदन में मतदान कराया जाता है ।यदि मतदान द्वारा विधेयक को स्वीकार कर लिया जाता है तो इसके साथ ही प्रतिवेदन

अवस्था पूर्ण हो जाती है । विधेयक के पारित होने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवस्था यही होती है ।

विधेयक पारित होने की अंतिम अवस्था तीसरा वाचन है । विधेयक के सभी खंडो पर और अनुसूचियों पर, यदि कोई हों, सदन के विचार करने तथा स्वीकृति पश्चात् मंत्री यह प्रस्ताव कर सकता है कि विधेयक को पास किया जाए। यह तीसरा वाचन कहलाता है । इस स्तर पर विधेयक की प्रत्येक धारा पर चर्चा तथा मतदान नहीं होता है बल्कि मूल सिद्धातों पर ही वाद –विवाद होता है । जिस सदन में विधेयक पेश किया गया हो उसमें पास किए जाने के बाद उसे सहमति के लिए दूसरे सदन में भेजा जाता है। वहां विधेयक फिर इन तीनों अवस्थाओं में से गुजरता है।

किसी विधेयक पर दोनों के बीच असहमति के कारण गतिरोध होने पर एक असाधारण स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जिसका समाधान दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में होता है। जब दोनों सदनों द्वारा कोई विधेयक अलग अलग या संयुक्त बैठक में पास कर दिया जाता है तो उसे राष्ट्रपति के पास भेजा जाता है । राष्ट्रपति के अनुमति मिलते ही अनुमति की तिथि से विधेयक अधिनियम बन जाता है । इसके पश्चात् कानून को सरकारी गजट में प्रकाशित कर दिया जाता है।

दूसरी ओर ,वित्त विधेयक संविधान के अनुसार केवल लोक सभा में ही प्रस्तुत किया जा सकता है । कोई भी विधेयक वित्त विधेयक है या नहीं , इसका निर्धारण लोक सभा अध्यक्ष करता है । लोक सभा द्वारा पारित वित्त विधेयक को राज्य सभा में भेजा जाता है । राज्य सभा को 14 दिनों के अन्दर अपनी सुझावों के साथ विधेयक को वापस करना पड़ता है । सुझावों को मानना या न मानना लोक सभा पर निर्भर है । यदि 14 दिनों के अन्दर यदि वित्त विधेयक राज्य सभा से वापस नहीं आता तो उसे उसी रूप में पारित मान लिया जाता है जिस रूप में लोक सभा ने उसे भेजा था । तत्पश्चात राष्ट्रपति की स्वीकृति मिलते ही उसे कानून का रूप मिल जाता है ।

<u>संसदीय समितियों की भूमिका</u>

भारतीय राजव्यवस्था में शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत प्रभावी है जिसके तहत संविधान में विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्र की लक्ष्मण रेखा साफ-साफ खींच दी गई है । इसके अनुसार कानून बनाना विधायिका का काम है, इसे लागू करना कार्यपालिका का और विधायिका द्वारा बनाए गए कानूनों के संविधान सम्मत होने की जांच करना न्यायपालिका काम है। संविधान समय की मांग के मुताबिक बदला जा सके, इसके लिए उसमें संशोधन जैसा बेहद महत्वपूर्ण अधिकार विधायिका के पास है । संसद के कार्यों में विविधता तो है, साथ ही उसके पास काम की अधिकता भी रहती है। चूंकि उसके पास समय बहुत सीमित होता है, इसलिए उसके समक्ष प्रस्तुत सभी विधायी या अन्य मामलों पर गहन विचार नहीं हो सकता है। अत: इसका बहुत-सा कार्य समितियों द्वारा किया जाता है।

संसद के दोनों सदनों की समितियों की संरचना कुछ अपवादों को छोड़कर एक जैसी होती है। इन समितियों में नियुक्ति, कार्यकाल, कार्य एवं कार्य संचालन की प्रक्रिया कुल मिलाकर करीब एक जैसी ही हैं और यह संविधान के अनुच्छेद 118 (1) के अंतर्गत दोनों सदनों द्वारा निर्मित नियमों के तहत होती है।

सामान्यत: ये समितियां दो प्रकार की होती हैं - स्थायी समितियां और तदर्थ समितियां। स्थायी समितियां प्रतिवर्ष या समय-समय पर निर्वाचित या नियुक्त की जाती हैं और

इनका कार्य कमोबेश निरंतर चलता रहा है। तदर्थ समितियों की नियुक्ति जरूरत पड़ने पर की जाती है तथा अपना काम पूरा कर लेने और अपनी रिपोर्ट पेश कर देने के बाद वे समाप्त हो जाती हैं।

स्थायी समितियां लोकसभा की स्थायी समितियों में तीन वित्तीय समितियों, यानी लोक लेखा समिति, प्राकक्लन समिति तथा सरकारी उपक्रम समिति का विशिष्ट स्थान है और ये सरकारी खर्च और निष्पादन पर लगातार नजर रखती हैं। लोक लेखा समिति तथा सरकारी उपक्रम समिति में राज्य सभा के सदस्य भी होते हैं, लेकिन प्राक्कलन समिति के सभी सदस्य लोकसभा से होती हैं।

लोक लेखा समिति भारत सरकार के विनियोग तथा वित्त लेखा और लेखा नियंत्रक तथा महालेखा परीक्षक की रिपोर्ट की जांच करती है। यह सुनिश्चित करती है कि सरकारी धन संसद के निर्णयों के अनुरूप ही खर्च हो। यह अपव्यय, हानि और निरर्थक व्यय के मामलों की ओर ध्यान दिलाती है। प्राक्कलन समिति यह निर्धारित करती है कि प्राक्कलनों में निहित नीति के अनुरूप मितव्ययिता बरती जा सकती है या नहीं तथा संगठन, कार्य कुशलता और प्रशासन में सुधार किस सीमा तक किए जा सकते हैं। यह इस बात की भी जांच करती है कि धन प्राक्कलनों में निहित नीति के अनुरूप ही व्यय किया जा सकता है या नहीं। समिति इस बारे में भी सुझाव देती है कि प्राक्कलन को संसद में किस रूप में पेश किया जाए। सरकारी उपक्रम समिति नियंत्रक तथा महालेखा परीक्षक की, यदि कोई रिपोर्ट हो, तो उसकी जांच करती है। वह इस बात की भी जांच करती है कि ये सरकारी उपक्रम कुशलतापूर्वक चलाए जा रहे हैं या नहीं इनका प्रबंध ठोस व्यापारिक सिद्धांतों और विवेकपूर्ण वाणिज्यिक प्रक्रियाओं के अनुसार किया जा रहा है या नहीं।

इन तीन वित्तीय समितियों के अलावा, लोकसभा की समिति ने विभागों से संबंधित 17 स्थायी समितियां गठित करने की सिफारिश की थी। इसके अनुसार 8 अप्रैल, 1993 को इन 17 समितियों का गठन किया गया। जुलाई 2004 में नियमों में संशोधन किया गया, ताकि ऐसी ही सात और समितियां गठित की जा सकें। इस प्रकार से इन समितियों की संख्या 24 हो गई है। इन समितियों के निम्नलिखित कार्य हैं:

1. भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों एवं /विभागों के अनुदानों की मांग पर विचार करना और उसके बारे में सदन को सूचित करना ;
2. लोकसभा के अध्यक्ष या राज्यसभा के सभापति द्वारा समिति के पास भेजे गए ऐसे विधेयकों की जांच और जैसा भी मामला हो, उसके बारे में रिपोर्ट तैयार करना;
3. मंत्रालयों और विभागों की वार्षिक रिपोर्टों पर विचार करना तथा उसकी रिपोर्ट तैयार करना; और
4. सदन में प्रस्तुत नीति संबंधी दस्तावेज, यदि लोकसभा के अध्यक्ष अथवा राज्य सभा के सभापति द्वारा समिति के पास भेजे गए हैं, उन पर विचार करना और जैसा भी हो, उसके बारे में रिपोर्ट तैयार करना।

इसके अतिरिक्त दोनों सदनों में अन्य स्थायी समितियां भी गठित है , जिनका विवरण निम्न है :

.जांच समितियां:

1. याचिका समिति विधेयकों और जनहित संबंधी मामलों पर प्रस्तुत याचिकाओं की जांच करती है और केन्द्रीय विषयों पर प्राप्त प्रतिवेदनों पर विचार करती है; और

2. विशेषाधिकार समिति सदन या अध्यक्ष/सभापति द्वारा भेजे गए विशेषाधिकार के किसी भी मामले की जांच करती हैं;

.आश्वासन समितियां:

सरकारी आश्वासनों से संबंधी समिति मंत्रियों द्वारा सदन में दिए गए आश्वासनों, वादों एवं संकल्पों पर उनके कार्यान्वित होने तक नजर रखती है; अधीनस्थ विधि निर्माण समिति इस बात की जांच करती है कि क्या संविधान द्वारा प्रदत्त विनियमों, नियमों, उप-नियमों तथा प्रदत्त शक्तियों का प्राधिकारियों द्वारा उचित उपयोग किया जा रहा है;

.सदन के दैनिक कार्य से संबंधित समितियां:

कार्य मंत्रणा समिति सदन में पेश किए जाने वाले सरकारी एवं अन्य कार्य के लिए समय-निर्धारण की सिफारिश करती है। इसके अलावा , राज्य सभा की कार्यमंत्रणा समिति बहस के लिए समय के निर्धारण की सिफारिश करती है । नियम समिति सदन में कार्यविधि और कार्यवाही के संचालन से संबंधित मामलों पर विचार करती है और नियमों में संशोधन या संयोजन की सिफारिश करती है, और

सदन की बैठकों में अनुपस्थित सदस्यों संबंधी लोकसभा की समिति सदन के सदस्यों की बैठकों से अनुपस्थिति या छुट्टी के आवेदनों पर विचार करती है। राज्य सभा में इस प्रकार की कोई समिति नहीं है। सदस्यों की छुट्टी या अनुपस्थिति के आवेदनों पर सदन स्वयं विचार करता है;

.अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की समिति इसमें दोनों सदनों के सदस्य होते हैं। यह केंद्र सरकार के कार्यक्षेत्र में आने वाली अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण संबंधी मामलों पर विचार करती है और इस बात पर नजर रखती है कि उन्हें जो संवैधानिक संरक्षण दिए गए हैं, वे ठीक से कार्यान्वित हो रहे हैं या नहीं।

i.सदस्यों को सुविधाएं प्रदान करने संबंधी समितियां:

सामान्य प्रयोजन संबंधी समितिया सदन से संबंधित ऐसे मामलों पर विचार करती है जो किसी अन्य संसदीय समिति के अधिकार क्षेत्र में नहीं आते तथा अध्यक्ष/सभापति को इस बारे में सलाह देती है, और आवास समिति सदस्यों के लिए आवास तथा अन्य सुविधाओं की व्यवस्था करती है । संसद सदस्यों के वेतन और भत्तों संबंधी संयुक्त समिति इस संसद सदस्यों के वेतन, भत्ते एवं पेंशन अधिनियम 1954 के अंतर्गत गठित की गई है। संसद सदस्यों के वेतन, भत्ते एवं पेंशन संबंधी नियम बनाने के अतिरिक्त, यह उनके चिकित्सा, आवास, टेलीफोन, डाक, निर्वाचन क्षेत्र एवं सचिवालय संबंधी सुविधाओं के संबंध में नियम बनाती है ।

इसके अतिरिक्त अन्य समितियां भी लोक सभा एवं राज्य सभा में क्रियाशील है , जिनमे पुस्तकालय समिति , महिला अधिकारिता समिति ,आचार संहिता समिति आदि समितियां शामिल हैं ।

<u>नीति निर्माण में विधान मंडल की बदलती भूमिका</u>

विधान मंडल का गठन मूलतः विधि निर्माण के लिए होता है परन्तु विधि निर्माण के अतिरिक्त विधान मंडल के अनेक कार्य हैं तथा इसकी शक्तियां भी व्यापक है । आधुनिक युग में राज्य का शायद कोई ऐसा क्षेत्र है जहाँ विधान मंडल या विधायिका का प्रभाव या

संबंध नहीं हो । विधायिका के प्रमुख कार्यों में प्रशासन की देखरेख, बजट पारित करना, लोक शिकायतों की सुनवाई तथा विभिन्न विषयों यथा विकास योजनाओं, अंतर्राष्ट्रीय संबंध एवं राष्ट्रीय नीतियों पर चर्चा करना शामिल है। कतिपय परिस्थितियों में संसद अनन्य रूप से राज्यों के लिए आरक्षित इसकी परिधि के अंतर्गत आने वाले किसी विषय के संबंध में विधायी शक्ति को अभिग्रहीत कर सकती है। संसद में राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाने, उच्चतम एवं उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों, मुख्य निर्वाचन आयुक्त तथा नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक को संविधान में निर्धारित प्रक्रिया विधि के अनुसार महाभियोग द्वारा हटाने की शक्तियां भी विहित है। सभी विधानों के लिए संसद के दोनों सदनों की सहमति आवश्यक है। संविधान में संशोधन आरम्भ करने की शक्ति निहित है।

जैसा अन्य संसदीय लोकतंत्रों में होता है, भारत की संसद के विधायिका के मौलिक कार्य, प्रशासन की देखभाल, बजट पारित करना, लोक शिकायतों की सुनवाई और विभिन्न मुद्दों पर चर्चा करनी होती है जैसे विकास योजनाएं, राष्ट्रीय नीतियां, और अंतरराष्ट्रीय संबंध। केन्द्र और राज्यों के बीच अधिकारों का वितरण, जो संविधान में बताए गए हैं, अनेक प्रकार से संसद का सामान्य प्रभुत्व विधायी क्षेत्र पर है। विषयों की एक बड़ी श्रृंखला के अलावा, सामान्य समय में भी संसद कुछ विशिष्ट परिस्थितियों के तहत उस कार्यक्षेत्र के अंदर आने वाले विषयों के संदर्भ में विधायी अधिकार ले सकती है, जो विशिष्ट रूप से राज्यों के लिए आरक्षित हैं। संसद की राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाने के अधिकार और उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के न्यायधीशों को हटाने का अधिकार प्राप्त है। इसे संविधान में बताई गई प्रक्रियाविधि के अनुसार उपरोक्त के साथ मुख्य चुनाव आयुक्त और नियंत्रक एवं महालेखाकार को निष्कासित करने का अधिकार प्राप्त है। सभी कानूनों को संसद के दोनों सदनों की स्वीकृति आवश्यक है। वित्त विधेयकों के संदर्भ में, यद्यपि, लोकसभा की इच्छा मानी जाती हैं। प्रदत्त विधायन की भी समीक्षा की जाती है और यह संसद के द्वारा नियंत्रित है।

संसदीय लोकतंत्र की परम्पराओं के पालन और उनके संरक्षण के प्रति प्रारंभिक भारतीय सरकारें बेहद गंभीर थीं । 1952 से लेकर 1970 के बीच विपक्ष ने भी संसदीय कामकाज को बहुत गंभीरता से लिया गया और भारतीय संसद की विशिष्ट कार्यशैली विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान किया । शून्यकाल और प्रश्नकाल को सरकार की जवाबदेही सुनिश्चित करने के हथियार के रूप में विकसित करने और उसका कारगर इस्तेमाल करने के काम में मधु लिमये, जॉर्ज फर्नांडिस और ज्योतिर्मय बसु जैसे सांसदों ने विशेष रूप से ख्याति अर्जित की ।

लेकिन इन दिनों सदन में बढ़ रहे लगातार गतिरोधों से जनता की बुनियादी समस्याओं और देश की राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय नीतियों पर सार्थक चर्चा नहीं हो पाती। लेकिन अब संसद में महत्वपूर्ण और ज्ञानवर्धक चर्चाएं बहुत कम देखने में आती हैं । इस कारण जनता की निगाह में संसद और सांसदों की प्रतिष्ठा गिरी है। सरकार और उसके विभागों में व्याप्त भ्रष्टाचार संसद में भी प्रवेश कर गया है। कुछ साल पहले 'नोट के बदले

वोट' वाले मामले में कई सांसदों की सदस्यता समाप्त की गई, तब तो हद ही हो गई । इसीलिए आज देश में सम्पूर्ण राजनीतिक वर्ग को संदेह की दृष्टि से देखा जाने लगा है ।

संसदीय लोकतंत्र में बहुमत का शासन है। संसद के सत्रों में चर्चा का प्रावधान इसीलिए किया गया है ताकि सरकार द्वारा लाये गए विधेयकों पर सार्थक चर्चा द्वारा विपक्ष उनमें संशोधन सुझा सके और तर्कपूर्ण ढंग से सरकार के सामने अपना दृष्टिकोण रखकर उसके नजरिए में बदलाव लाने की कोशिश कर सके।

<u>सारांश</u>

विधायिका शब्द विधि बनाने वाली सरकारी इकाई के लिये प्रयोग में आता है । नीति निर्माण प्रक्रिया में सरकार के तीनो अंग- कार्यपालिका , व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका – किसी न किसी रूप में सम्बद्ध होते हैं। कार्यों की प्रकृति एवं सार्वजनिक उत्तरदायित्व के दृष्टिकोण से विधायिका या विधान मंडल तीनों अंगों में सर्वोच्च है । भारतीय संविधान में संसदीय प्रणाली को अपनाया गया है जिसके अनुसार कार्यपालिका एवं विधायिका एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े होते है । वस्तुतः विधायिका के सदस्य ही कार्यपालिका का निर्माण करते है और कार्यपालिका विधायिका के प्रति उत्तरदायी होती है । इन्हीं कारणों से नीति निर्माण एवं प्रशासन के मध्य एक अटूट रिश्ता हो जाता है । भारतीय संसद का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य देश के लिए कानून का निर्माण है । संसद को संघ सूची ,समवर्ती सूची तथा विशेष परिस्थितियों में राज्य सूची के विषयों पर भी कानून बनाने का अधिकार है । भारत का राष्ट्रपति संसद का अंग होता है। संसद द्वारा पारित विधेयक तब तक अधिनियम नहीं बनता जब तक कि राष्ट्रपति उस पर अपनी स्वीकृति नहीं देता है । यद्यपि राष्ट्रपति संसद के किसी सदन का सदस्य नहीं होता , उसे संसद का अधिवेशन बुलाने ,स्थगित करने तथा लोक सभा को भंग करने का अधिकार है। संसद के कार्यों में विविधता तो है, साथ ही उसके पास काम की अधिकता भी रहती है। चूंकि उसके पास समय बहुत सीमित होता है, इसलिए उसके समक्ष प्रस्तुत सभी विधायी या अन्य मामलों पर गहन विचार नहीं हो सकता है। अत: इसका बहुत-सा कार्य समितियों द्वारा किया जाता है । संसद के कार्यो में निरंतर हो रहे परिवर्तन के कारण आप इसकी भूमिका में भी बदलाव पायेंगे ।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ सूची</u>

1. श्रीराम माहेश्वरी , 2009 , *भारतीय प्रशासन*, ओरिएंट ब्लैकस्वान , नयी दिल्ली.
2. चार्ल्स ई . लिंडब्लौम, 1968 , *द पौलिसी मेकिंग प्रोसेस* , इंगलवुड क्लिप्स, एन. जे.प्रेन्टिस हॉल ,आई.एन .सी.
3. पॉल एच. एपेल्बी , 1949 ,*पालिसी एंड एडमिनिस्ट्रेशन* , अलबामा यूनिवर्सिटी प्रेस .
4. सुरेन्द्र कटारिया , 2009, *प्रशासन एवं लोकनीति* , मयूर पेपरबैक्स ,नयी दिल्ली.
5. मनोज सिन्हा ,2010, *प्रशासन एवं लोकनीति* ,ओरिएंट ब्लैकस्वान , नयी दिल्ली.
6. आर.बी. जैन , 2009 , *भारतीय प्रशासन में समकालीन मुद्दे ,* विवेक प्रकाशन , नयी दिल्ली.
7. सी.बी.गेना ,2010,तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएं, विकास पब्लिशिंग हाउस , नयी दिल्ली.

8. सुषमा यादव एवं राम अवतार शर्मा, 1997, *भारतीय राजनीति ज्वलंत प्रश्न*, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय,दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली.

डॉ.डी.के.पी.चौधरी
असिस्टेंट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
दूरभाष:9411346372
ईमेल:dkpchaudhary@gmail.com